कश्मीर की मीरा : ललद्यद

प्रो. रसाल सिं एवं आर. आशा

सारांश : ललद्यद वा ललारिफ़ा कश्मीर की आदि कवयित्री, एक शैव भक्त एवं साध्वी के रूप में जानी जाती हैं। उन्होंने कश्मीरी शैव दर्शन का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने वाखों के माध्यम से कश्मीरी जन मानस को सदाचार, आत्मशुद्धि और मानव बंधुत्व का उपदेश दिया । उस परम शिव तक पहुँचने के लिए तथा उस वास्तविक ज्ञान की तलाश हेतु उन्होंने योग और कठोर साधना का मार्ग अपनाया। सिर्फ यही नहीं समाज में व्याप्त धार्मिक आडंबर, रूढ़ियों आदि के प्रति विरोध का स्वर रचा । स्त्री चेतना का स्वर भी उनमें प्रमुख रूप से देखने मिलता है। कश्मीर में ललद्यद को वही स्थान प्राप्त है, जो हिंदी साहित्य जगत में संत कवयित्री मीराबाई को । दोनों दो अलग संस्कृति, अलग परंपरा से सम्बद्ध होने के बावजूद अध्यात्म रूपी एक सूक्ष्म कड़ी से जुडी हुई हैं । मीरा और ललद्यद ने दुनियावी माया मोह के बंधनों को त्याग कर स्वयं को पूर्ण रूप से उस परम शक्ति को समर्पित कर दिया । दोनों में विषमताओं की अपेक्षा समानताएं अधिक हैं । इसीलिए ललद्यद को कश्मीर की मीरा कहने में कोई अत्युक्ति नहीं न होगी । अतः भक्ति के अखिल भारतीय स्वरूप को पहचानने के लिए तथा कश्मीर की साझी विरासत को पुष्ट करने हेतु ललद्यद का अध्ययन अत्यावश्यक है ।

बीज शब्द : भक्ति आन्दोलन, कश्मीरी साहित्य, शैव दर्शन, भगवद्भक्ति, आत्मनिवेदन, एकात्मता, रहस्यवाद, धर्म, अध्यात्म, योग, साधना, आडंबरवादिता, रूढ़िवादिता, पाखण्ड, स्त्री चेतना, वर्ग-भेद, नवजागरण

मूल आलेख : *"भक्ति द्रविड़ उपजी लाये रामानंद*

परगट किया कबीर ने, सप्त द्वीप व नवखंड"

भक्ति आन्दोलन से सम्बंधित यह पंक्ति आज भी अपनी प्रासंगिकता बनाये हुए है । दक्षिण भारत में छठी-सातवीं शताब्दी में शुरू हुआ यह एक ऐसा देशव्यापी जन आन्दोलन था, जिसका देश के सांस्कृतिक इतिहास में एक महत्वपूर्ण योगदान रहा । भक्ति का यह सोता दक्षिण से उत्तर भारत की ओर आया और कालांतर में पूरे दक्षिण एशिया में फैल गया । ऐसे में अखंड भारत का हिस्सा रहा जम्मू-कश्मीर इससे प्रभावित हुए बिना कैसे रह सकता था? आज कश्मीर राजनीतिक उथल-पुथल और सैन्य संघर्ष के कारण भले ही सुर्खियों में रहता हो, लेकिन एक समय था जब यह पतंजलि, कल्हण, भामह, आनंदवर्धन, अभिनव गुप्त जैसे संस्कृत के महान आचार्यों के सिंचित ज्ञान एवं लल्लेश्वरी, हब्बाखातून, अरणिमाल और रूपभवानी जैसी साधिकाओं की साधना के चलते ज्ञान और अध्यात्म का केंद्र माना जाता था । प्रदेश में कश्मीरी के साथ-साथ संस्कृत, फ़ारसी, हिंदी, डोगरी, उर्दू जैसी कई भाषाओं के साहित्य को फलने-फूलने का अवसर प्राप्त हुआ । 1250 से 1400 तक

की अवधि जिसे कश्मीरी साहित्य का आदिकाल माना जाता है, में मुख्य रूप से संतों की मुख्तक वाणी की प्रमुखता रही। संत कवयित्री ललद्यद इस वाणी की मुखर स्वर रहीं। वे उस काल का प्रतिनिधित्व करती हैं, जब कश्मीर सूफ़ी और संतों की साझी विरासत का प्रतीक था।

14 वीं शताब्दी में कश्मीर स्थित पाम्पोर में जन्मीं लल्लेश्वरी कश्मीर की आदि संत कवयित्री मानी जाती हैं। ललद्यद, लल, लला, ललारिफा आदि नामों से विख्यात, वे एक शैव योगिनी होने के साथ-साथ एक भक्त कवयित्री, जोगन एवं साध्वी थीं, जिन्होंने कश्मीरी शैव दर्शन (त्रिक, प्रत्यभिज्ञा दर्शन) का प्रतिनिधित्व किया। कश्मीर की साझी संस्कृति की वाहिका रहीं, ललद्यद हिन्दू और इस्लाम दोनों ही सम्प्रदायों में समान रूप से प्रतिष्ठित रहीं। हिन्दुओं में शैव योगिनी और लल्लेश्वरी, तो इस्लाम में सूफ़ी दरवेश और ललारिफ़ा नाम से पहचानी गईं। उनके मुख निःसृत वाणी को वाख की संज्ञा दी गयी। ये वाख काव्य की उत्कृष्ट परिपाटी से भले दूर हों, लेकिन आम जनपर इसका प्रभाव इतना गहरा रहा कि वे मग्न होकर उनके पीछे चल पड़ते थे। उनके वाख तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों का सहज दर्शन हैं। सदाचार, आत्मशुद्धि एवं मानव बंधुत्व से पूर्ण उनके वाखों ने कश्मीरी जनमानस को गहरे आंदोलित किया। उनके वाखों ने कश्मीर की आत्मा को वर्षों से जीवित रखा है।वेद राही के शब्दों में,*"कश्मीरी भाषा की आदि कवयित्री ललद्यद की कविता में जो गहराई और उत्कर्ष है, वहां तक पहुंचने के लिए आज भी कश्मीरी के बड़े-बड़े कवि तरसते हैं। उस शिखर तक लपकते तो सब हैं, परंतु वहां तक पहुंचने का सपना अभी किसी का पूरा नहीं हुआ है।"*[1]

कश्मीरी साहित्य में ललद्यद को हम उसी रूप में देख सकते हैं, जिस प्रकार हिंदी साहित्य में मीराबाई को। दोनों भले ही दो अलग संस्कृति और परम्परा का प्रतिनिधित्व करती हैं, बावजूद इसके अध्यात्म रूपी जिस एक सूक्ष्म कड़ी से जुड़ी हुई हैं, वह है उनकी रहस्यात्मक काव्य संवेदनशीलता। भवसागर रूपी संसार को पार करने के लिए दोनों ने ही भगवद्भक्ति का मार्ग चुना। दोनों ने विद्रोह का काव्य रचा। विद्रोह सामाजिक रूढ़ियों और मान्यताओं से। विद्रोह नारीत्व के निर्धारित मानदंडों से। दोनों के जीवन और रचना संसार में हमें काफी हद तक सामंजस्य देखने को मिलता है।

मीरा की भक्ति माधुर्य भाव की थी। वे बाल्यावस्था से ही भक्ति भावना में विलीन रहीं तथा लोकलाज और कुल की मर्यादा तजकर कृष्ण के प्रेम में मतवाली बनी फिरती थीं। *'मोहनी मूरत साँवरी सूरत, नैना बने बिसाल'* कहते हुए उनकी साँवरी सूरत पर वारि जाती थीं। उन्होंने अपना अधिकांश समय भगवद्भक्ति एवं साधु-संतों की संगति में व्यतीत किया। ललद्यद के शिव सर्वत्र व्याप्त हैं। वे कहती हैं,*"शिव छुय थलि रोज़ान।"*[2] उस परम सत्य अथवा उस शिव की तलाश में वे मंदिरों और तीर्थों में नहीं भटकतीं, बल्कि एकांत में उनका अवगाहन करती हैं। बहिर्जगत के आडम्बरों में नहीं, बल्कि अंतर्जगत में उनका स्मरण करती हैं। वे कहती हैं,*"अंदर आ'सिथ न्यबर छोंडुम* अर्थात् *शिव मेरे अन्दर थे मगर मैं उन्हें बाहर ढूँढ़ती रही।"*[3]ललद्यद ने

उस पारलौकिक शिव तक पहुँचने के लिए ध्यान और प्राणायाम जैसे यौगिक अभ्यासों को अपना माध्यम बनाया। उनके अनुसार मोक्ष तभी संभव है, जब भक्ति में ध्यान (प्राणायाम) और ईश्वर प्रेम दोनों का ही योग हो। वे कहती हैं,

"पवन पूरिथ युस अनि वगि,
तस ब्व ना स्पर्शि, न व्वछि तॅ त्रेशं।
ति युस करून अंति तगि,
सम्सारस सुय ज़्ययि नेछ।"

अर्थात् जो *पवन को पूरक (भीतर-बाहर खींचकर अर्थात् प्राणायाम) द्वारा नियंत्रित करे, उसको न भूख स्पर्श कर सकती है और न प्यास। जो अंत तक यह विधि अपनाए संसार में उसी का जीना सार्थक है।*[4]

मीरा ने अपने प्रियतम रूपी कृष्ण तक पहुँचने के लिए उनकी मूर्ति को माध्यम बनाया। पति-प्रेम रूपी भक्ति में मग्न मीरा दीवानी और मतवाली बनी फिरती थी। मीरा के प्रेम में बिछोह है, तड़पन है। *"मीराँ दासी आ चरणाँ री, मिल्ज्यो कंठ लगाई।"*[5]ललद्यद ने मीरा की भाँती अपने शिव को किसी विशेष रूप या आकार में स्थापित नहीं किया,बल्कि अपने अंतर्मन में उसके अस्तित्व को स्वीकारा। वे कहती हैं,

"भक्त-संन्यासी मंदिर-मंदिर डोले
उस परमेश्वर को पाने के लिए
उसे जो उसके भीतर है !"[6]

वे उस परम सत्य (शिव) की तलाश में तथा अपने जीवन के ध्येय को समझने हेतु मर्यादाओं को तिलांजलि देकर निर्वस्त्र गाँवों एवं वन-जंगलों में वैरागिन बन फिरती थीं। उनका मानना था कि उस शिव के अलावा अन्य कोई पुरुष नहीं है। ललद्यद को मजनूँ-ए-आकिला अर्थात् प्रेम में पागल कहा जाना, इस बात की पुष्टि करता है कि मीरा का सा पागलपन उनमें भी था। कह सकते हैं कि उस परम सत्य तक पहुँचने के लिए दोनों के माध्यम भले अलग रहे हों, लेकिन अंतिम लक्ष्य उस अद्वैत के साथ एकात्मता ही रहा।

आत्मनिवेदन,जहाँ भक्त अपनी स्वतंत्र सत्ता न रखते हुए निःस्वार्थ रूप से अपने को भगवान के चरणों में सदा के लिए समर्पित कर देता है, भक्ति की सर्वोत्तम अवस्था मानी गयी है। ललद्यद और मीरा में हमें यह आत्मनिवेदन की स्थिति देखने को मिलती है।आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भक्ति के लिए श्रद्धा और प्रेम के योग की बात करते हुए, दोनों की मात्रा के भेद से भक्ति के कई स्वरूपों की बात की है। वे कहते हैं, *"जहाँ भक्त केवल अपना और भगवान का सम्बन्ध लेकर चलता है वहाँ प्रेम का अवयव प्रधान हो जाता है। जहाँ दोनों अवयव समान हों वहाँ भक्ति की साम्यावस्था समझनी चाहिए।"*[7]मीरा की भक्ति में प्रेम का अवयव प्रधान है, तो वहीं ललद्यद में हमें भक्ति की साम्यावस्था देखने को मिलती है।

मध्यकाल और उससे भी पहले तक स्त्रियों के लिए ज्ञान और अध्यात्म के सभी रास्ते बंद थे। उन्हें हमेशा एक रोड़े की तरह ही देखा गया। कभी माया, तो कभी वासना का केंद्र माना गया। इसके बावजूद उन्होंने धर्म की राह पर चलकर अपने लिए मुक्ति के द्वार तलाश लिए। बुद्धकालीन थेरियों से लेकर आंडाल, मीरा, ताज बेग़म और ललद्यद जैसी संत कवयित्रियों के सन्दर्भ में यह बात स्पष्ट हो जाती है। इन्होंने रहस्यवाद का सहारा लेकर रूढ़िवादी बंधनों से मुक्त होने की बात की एवं ज्ञान और साधना के क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित किए। मीरा और ललद्यद संत और भक्त बाद में, स्त्री पहले थीं। स्त्रीत्व के निर्धारित मानदंडों से ऊपर उठकर समाज को चुनौती देना उनके लिए कितना कठिन रहा होगा, इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है।अल्पायु में ही दोनों का विद्रोह दिखने लगा था, जब उन्हें विवाह और घर-गृहस्थी के बंधन में बाँध दिया जाता है। मीरा की भाँति ललद्यद ने भी ग्रहस्थ धर्म का पालन करते हुए ब्रम्ह-चिंतन में पूर्ण रूप से निमग्न हो गयीं। राणाकुल की वधु मीरा ने जहाँ अपने पति की मृत्यु पर सती होना अस्वीकार किया, वहीं ललद्यद ने भी वैवाहिक जंजाल और घुटन से अपने को मुक्त कर उस असीमित के साथ अपने बंधन को पोषित किया। *"वे (ललद्यद) कट्टर-पंथिता, विशेषकर परम्परावादिता, आडंबरवादिता व रूढ़िनिष्ठा की घोर विरोधिनी थीं।"*[8]

दोनों अपने ससुराल में कई मानसिक और शारीरिक प्रताडनाओं को सहते हुए सहनशीलता का प्रमाण देती हैं। राणा के भेजे गए विष का सेवन मीरा ने अमृत के समान कर लिया, वहीं ललद्यद के सन्दर्भ में एक सूक्ति प्रसिद्द है, *"हौंड मांरितन किन कठ, ललि नीलवठ चलि न जाँह"* अर्थात् *घर में चाहे भेड़ कटे या बकरा, लला के भाग्य में तो पत्थर ही लिखे हैं।*[9]माना जाता है कि लला की निर्दयी सास थाली में पत्थर रखकर उसपर भात की परत चढ़ा देती थी, जिससे वह मात्रा में अधिक लगे। इसके साथ ही उसपर कई तरह के अनर्थकारी आरोप भी लगाये जाते थे। वे इन शारीरिक और मानसिक प्रताड़नाओं व यंत्रणाओं को चुपचाप सहते हुए अंत में विरक्त-विरागिनी होकर अपने को उस बंधन से मुक्त किया और शांत प्रतिरोध का स्वर रचा। कह सकते हैं कि मीरा और ललद्यद ने सिर्फ साधना मार्ग का ही अनुसरण नहीं किया, बल्कि 20 वीं सदी में शुरू हुए स्त्री विमर्श के बीजारोपण का भी काम किया।

मीरा और ललद्यद ने अपनी खुद की दुनिया स्थापित करने के अलावा समाज की चिंताओं और उसके निर्धारित रीतियों के प्रति अस्वीकृति को कविता के माध्यम से प्रकट किया। मीरा का साधुओं की संगति में बैठना राणाकुल के विरुद्ध था। इसके बावजूद वे उन सामाजिक प्रथाओं को अनसुना करते हुए समाज के दमित और बहिष्कृत वर्ग के बीच रहकर दान पुण्य का काम किया करती थीं। उनके काव्य का उद्देश्य समाज में धर्मनिरपेक्षता, मानवीयता और प्रेम कायम रखना था। उस समय मीरा निम्न वर्ग की आवाज़ बनकर उभरीं। ललद्यद ने भी व्यक्ति-भेद व वर्ग-भेद का फर्क नहीं माना। उनका मानना था कि सब उस परम शिव की ही अभिव्यक्ति हैं।धर्म के नाम पर हिन्दू-मुस्लिम के भेद को नकारते हुए वे मानवीयता के धर्म को अपनाती हैं: *"मन*

ज्ञान ह्योद' द त मुसलमान।"[10]लोगों को माया के बंधनों से छूटकर वास्तविक ज्ञान की तलाश की ओर प्रेरित किया। उनके वाखों में धर्म के प्रदर्शन का विरोध है। उनका मानना था कि ईश्वर की साधना के लिए कुशा, तेल, दीपक और जल आदि की आवश्यकता नहीं, सद्भाव से किया गया प्रभु का स्मरण मात्र काफी है, *"कुश पोश तेल दू.फ जल ना गछे।"*[11]धार्मिक अनुष्ठानों और पाखण्ड जैसे पशुबलि, तीर्थाटन, स्नानादिका उन्होंने कभी अनुसरण नहीं किया,

"देव
यह जप, तप, अनुष्ठान
नहीं काम के मेरे
व्रत-उपवास नहीं
सहज विधि कोई"[12]

मीरा और ललद्यद ने सामाजिक व्यवस्था के विरोध में किसी बड़ी क्रान्ति का बिगुल नहीं फूँका, बस उससे अस्वीकृति जताते हुए अपने काव्य के माध्यम से शांत प्रतिरोध का स्वर रचा। मीरा के प्रत्येक पद में कृष्ण का ही नाम स्मरण है लेकिन ललद्यद के वाख न केवल शिव साधना की बात करते हैं, बल्कि भारतीय जीवन मूल्यों और आदर्शों की सीख भी प्रदान करते हैं। उनके वाखों में उपदेशात्मकता की प्रवृत्ति सहज देखने को मिलती है।वे लोभ, असत्य, कपट जैसे मनोविकारों को त्यागने का उपदेश देकर योग, सहिष्णुता, साधना और माध्यम मार्ग को अपनाने की बात करती हैं। एक पंक्ति उद्धृत है,*"ह्यथक'रिथ राज फ़ेरिना अर्थात् राज्य पाकर व उसका उपयोग करने पर भी मन तृप्त नहीं होता और राज्य त्यागने पर भी मन को संतुष्टि नहीं। बिना लोभ के जीव मरता नहीं है, जीते जी मनुष्य मर जाए, वह इच्छा-लोभ को मार दे, यही ज्ञान की बात है।"*[13]

लोक भाषा में अभिव्यक्ति साधारण जन के अधिक निकट होता है। यही कारण है कि मीरा और ललद्यद द्वारा तत्कालीन जन भाषा के प्रयोग ने हिंदी एवं कश्मीरी जन मानस को गहरे आंदोलित किया। मीरा ने राजस्थानी मिश्रित ब्रज में अपने पदों की रचना की, तो ललद्यद ने भी संस्कृत की अपेक्षा कश्मीरी भाषा में अपने वाखों की रचना की। मीरा से पहले भी ब्रजभाषा में रचनाएँ होती रहीं, लेकिन लल्लेश्वरी का यह प्रयोग बिलकुल नया था। तत्कालीन पांडित्यपूर्ण भाषा (संस्कृत) की अपेक्षा लोक भाषा कश्मीरी का प्रयोग उन्हें भाषायी नवजागरण की प्रणेता बनाता है। प्रमुख कवि अग्निशेखर के अनुसार,*"संत कवयित्री ललद्यद कश्मीरी साहित्य की आदि कवयित्री ही नहीं, भारतीय भाषाई नवजागरण की प्रणेता, विद्रोही स्त्री-स्वर के अलावा भक्तिकाल की एक कालजयी अधिष्ठात्री भी थीं।"*[14]

भक्ति का ऐसा रूप, जो हमें मीराबाई, लल्लेश्वरी और अन्य संत कवयित्रियों में देखने मिलता है, जो आडंबर रहित है, पवित्र है, जिसमें त्याग और आत्मसमर्पण की भावना है,वर्तमान दुर्लभ है। आज भक्ति का

प्रदर्शन मात्र किया जाता है। वह व्यवसाय मात्र बनकर रह गई है। उसमें पाखंड और ढोंग का प्रवेश हो चुका है। आज धर्म और भक्ति के नाम पर ठेकेदारों की दुकानें चलती हैं।भक्ति और साधना की अंतिम ऊँचाई तक पहुँचने के लिए जिस कठोर तितिक्षा और तपस्या की आवश्यकता होती है,वह आज के समय में लगभग असंभव है।

निष्कर्षतःभक्तिकाल की व्यापक जन चेतना और उसके अखिल भारतीय स्वरूप से परिचित होने एवं मुख्यतः देश की साझी संस्कृति को पोषित करने के लिए ललद्यद की भक्ति एवं उनके वाखों को समझना अत्यंत आवश्यक है। हिन्दू धर्म के दो प्रमुख सम्प्रदाय, शैव और वैष्णव से सम्बंधित ललद्यद और मीरा में विषमताओं की अपेक्षा समानताएं अधिक हैं। ललद्यद ने जहाँ निराकार शिव की साधना अथवा उपासना की, वहीं मीरा ने खुद को पूरी तरह से उस मूर्ति के लिए समर्पित कर दिया, जो एक विशेष रूप में उनके लिए मौजूद थी और जिसे वह मृत्यु पर्यंत अपने साथ रखती है। मीरा ने भक्ति के स्फुट पदों की रचना की, तो ललद्यद ने वाखों की। मीरा ने भावनात्मक धरातल को अधिक स्पर्श किया, तो ललद्यद ने भावना के साथ-साथ बौद्धिकता का भी उद्घोष रचा। इन सबके बावजूद उनका रहस्यवाद, काव्य का सामाजिक पक्ष एवं स्त्री पक्ष कुछ ऐसे बिंदु हैं, जो उन्हें एक सूत्र में बाँधने का काम करती हैं।हालांकि अपने आराध्य के प्रति दोनों के दृष्टिकोण में भिन्नता है, लेकिन अंतिम लक्ष्य उस परम सत्य तक पहुंचना ही रहा। दोनों ने आध्यात्मिकता और मानवीयता के बीच एक सेतु का काम किया। कह सकते हैं कि ललद्यद को कश्मीरी साहित्य में वही स्थान प्राप्त है, जो हिंदी साहित्य में कृष्ण भक्त कवयित्री मीराबाई को। अतः ललद्यद को कश्मीर की मीरा कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

सन्दर्भ सूची -

1. ललद्यद, वेद राही, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, संस्करण- 2016, पृष्ठ 11
2. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 93
3. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 94
4. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 92
5. मीराँ ग्रंथावली, डॉ. कल्याण सिंह शेखावत, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण- 2017, पृष्ठ 112
6. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 24
7. चिंतामणि, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण- 2015 पृष्ठ 65
8. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 13
9. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 18
10. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 32

11. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 95
12. मैं ललद्यद, अग्निशेखर, प्रलेक प्रकाशन,महाराष्ट्र, 2022, पृष्ठ 88
13. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 92
14. ललद्यद, जयलाल कौल, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, संस्करण- 2019, पृष्ठ 7

प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष,
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग,
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय
उपरोक्त विभाग में शोधार्थी
संपर्क-सूत्र- 98800886847)